83-84

जनवरी-जून, 2020

ISSN 2349-1809

पुस्तक-वार्ता

ज्ञान शांति मैत्री

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

पुस्तक-वार्ता

संरक्षक
रजनीश कुमार शुक्ल
कुलपति

परामर्शदाता
हनुमानप्रसाद शुक्ल
प्रतिकुलपति

संपादक
मनोज कुमार राय

संपादक-मंडल
के. बालराजु
जयंत उपाध्याय
श्रीनिकेत कुमार मिश्र

प्रकाशक
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
पोस्ट : हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा 442 001 (महाराष्ट्र)
www.hindivishwa.org

संपादकीय संपर्क
संपादक : पुस्तक-वार्ता
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
पोस्ट : हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा 442 001 (महाराष्ट्र)
फोन : 07152-232943
E-mail : pustakvaarta.mgahv@gmail.com
समस्त पत्राचार प्रकाशन प्रभारी के नाम से ही किया जाए-

प्रकाशन प्रभारी
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
पोस्ट : हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा 442 001 (महाराष्ट्र)
फोन : 07152-232943
E-mail : pub.mgahv@gmail.com

मूल्य : वर्तमान अंक रु. 100/-
सदस्यता राशि मूल्य रु. 75/- के गुणक में। सदस्यता राशि केवल ऑनलाइन निम्नलिखित बैंक खाते में जमा करवा सकते हैं -

Account Holder's Name	: Finance Officer, Mahatma Gandhi Antarrashtriya Hindi Vishwavidyalaya, Wardha
Bank Name	: Bank of India, Wardha
Branch	: Hindi Vishwavidyalaya, Wardha
Account No.	: 972110210000005
IFSC Code No.	: BKID 0009721
MICR Code No.	: 442013003

डिजाइन : राजेश आगरकर

मुद्रण : राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक एवं विश्वविद्यालय की स्वीकृति आवश्यक है। प्रकाशित रचनाओं की रीति-नीति या विचारों से विश्वविद्यालय या संपादकों की सहमति अनिवार्य नहीं है।
विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र, वर्धा (महाराष्ट्र) होगा।

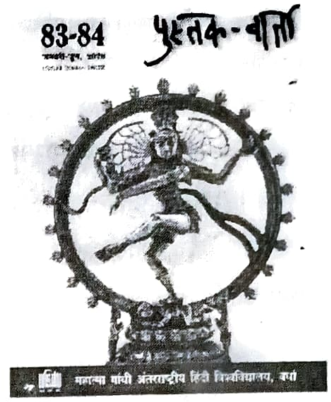

इस अंक में

1. **प्रसाद का साहित्य-दर्शन** / नंद दुलारे वाजपेयी 01
(पुस्तक : काव्य और कला तथा अन्य निबंध / लेखक : जयशंकर प्रसाद)

2. **सांस्कृतिक सुगंधों की अनुगूँज** / विजय बहादुर सिंह 08
(पुस्तक : काव्य और कला तथा अन्य निबंध / लेखक : जयशंकर प्रसाद)

3. **भारतीय कलाबोध का आख्यान है 'द डांस ऑफ शिवा'** / रजनीश कुमार शुक्ल 14
(पुस्तक : द डांस ऑफ शिवा / लेखक : आनंद केंटिश कुमारस्वामी)

4. **पुरातन में नूतन की खोज** / हूबनाथ पाण्डेय 18
(पुस्तक : आरोग्य निकेतन / लेखक : ताराशंकर बंद्योपाध्याय)

5. **स्वप्नदर्शी गणितज्ञ का वैचारिक संसार** / शाश्वती प्रधान 22
(पुस्तक : रामानुजन- द मैन एंड द मथेमेटिशियन / लेखक : शियाली रामामृत रंगनाथन)

6. **खिलते फूलों की भाषा** / अजीत राय 24
(पुस्तक : बच्चे की भाषा और अध्यापक : एक निर्देशिका / लेखक : प्रो. कृष्ण कुमार)

7. **मलयालम रामायणकार के जीवन-संघर्ष का अपूर्व दस्तावेज** / प्रो. जी. गोपीनाथन 26
(पुस्तक : अग्निसागर में अमृत / लेखक : सी. राधाकृष्णन)

8. **अद्वितीय प्रतिभाओं का कालपात्र** / आनंद प्रकाश 29
(पुस्तक : जियोग्राफी ऑफ जीनियस / लेखक : एरिक विनर)

9. **महात्मा का वैचारिक पर्यावरण** / डॉ. नमिता निम्बालकर 35
(पुस्तक : गांधी चिंतन एवं विचार दर्शन / लेखक : प्रो. सतीश चंद्र मित्तल)

10. **मार्क्सवाद के ध्वंसावशेषों में विचरण** / विनोद अनुपम 37
(पुस्तक : मार्क्सवाद का अर्धसत्य / लेखक : अनंत विजय)

11. **सेपियंस : इतिहास का नैतिक पर्यवेक्षण** / सन्नी कुमार 40
(पुस्तक : सेपियंस : मानव जाति का संक्षिप्त इतिहास / लेखक : युवाल नोआ हरारी)

12. **मानव सभ्यताओं के असमान विकास के मूल कारण** / प्रो. नवीन कुमार शर्मा 46
(पुस्तक : 'गन्स, जर्म्स एंड स्टील : द फेट्स ऑफ ह्यूमन सोसाइटीज' / लेखक : प्रो. जेरेड डायमंड)

13. **अँधेरे का सच** / शंकर शरण 48
(पुस्तक : भारत में इस्लामी साम्राज्यवाद की कहानी / लेखक : सीताराम गोयल)

14. **कथा अनुपस्थित संवेदना की** / डॉ. कृष्णा शर्मा 53
(पुस्तक : कौन ठगवा नगरिया लूटल हो / लेखक : मालती जोशी)

15. **विश्वसभ्यता के विकल्प का विमर्शीय रेखांकन** / डॉ. विश्वनाथ मिश्र 56
(पुस्तक : भारतीयता के सामासिक अर्थ-सन्दर्भ / लेखक : अम्बिकादत्त शर्मा)

16. **जल-प्रबंधन से उपजी विसंगतियाँ** / विपुल सिंह 60
(पुस्तक : वाटर : अबेंडन्स, स्कारसिटी एंड सिक्योरिटी / लेखक : जेरेमी जे. श्मिट)

17. **खामोश इतिहास का मुखर संस्मरण** / सुमित सौरभ 62
(पुस्तक : आपातकाल के संस्मरण / संपादक : प्रो. (डॉ.) अरुण कुमार भगत)

18. **स्वस्थ शिक्षा की ऐनक** / डॉ. अल्पना सिंह 65
(पुस्तक : अध्यापकीय जीवन का गुणनफल / लेखक : मिश्र, श्यामनारायण (सं. मनोज कुमार)

19. **नयी परिभाषा गढ़ता संवेदनशील चितेरा** / चंद्राली मुखर्जी 67
(पुस्तक : 'माई एडवेंचर्स विथ सत्यजीत राय: द मेकिंग ऑफ शतरंज के खिलाड़ी'' / लेखक : सुरेश जिंदल)

20. **सत्य के बहाने नयी राजनीति** / शान कश्यप 71
(पुस्तक : जिन्नाह : हिज सक्सेसेज, फेलियर्स, एंड रोल इन हिस्ट्री / लेखक : इश्त्याक अहमद)

21. **नयी लकीर खींचता उपन्यास** / पीयूष द्विवेदी 74
(पुस्तक : एक लड़की पानी पानी (उपन्यास) / लेखक : रत्नेश्वर)

22. **त्रासद सत्य की अंतर्कथा** / श्रद्धा सिंह 77
(पुस्तक : कुलभूषण का नाम दर्ज कीजिए / लेखक : अलका सरावगी)

23. **विभाजन का दर्द** / अविनाश द्विवेदी 81
(पुस्तक : मिडनाइटस फ्यूरीज / लेखक : नीशिद हज़ारी)

24. **संवैधानिक पदचिह्नों की पड़ताल** / प्रो. धर्मेंद्र कुमार मिश्रा 84
(पुस्तक : कान्स्टीट्यूशनल ला-। स्ट्रक्चर / संपादक : उदय राज राय)

25. **पाठ्यचर्या एवं नवाचार के सूत्र** / सारिका शर्मा 87
पुस्तक : रिकालिंग द फॉरगॉटन : एडुकेशन एंड मोरल क्वेस्ट / लेखक : अविजीत पाठक

26. **विस्मृति का स्मरण** / सत्येंद्र कुमार सिंह 90
(पुस्तक : द केमेज दैट इंडिया फॉरगॉट / लेखक : चिंतन चंद्रचूड़)

27. **ज्ञान का पुनर्शोधन** / प्रो. सुदीप कुमार जैन 93
(पुस्तक : जोणी पाहुड (योनि प्राभृत) / संपादक : डॉ. राजाराम जैन, डॉ. विद्यावती जैन)

28. **शाश्वत शांति की शाश्वत परिकल्पना** / प्रो. अभय कुमार मिश्र 98
(पुस्तक : पर्पेचूअल पीस : ए फिलसाफिकल स्केच / लेखक : इमानुएल कांट)

29. **वैदिक सूक्तों से झरती कथा** / डॉ. रमाकान्त राय 100
(पुस्तक : कथा शकुंतला की / लेखक : राधावल्लभ त्रिपाठी)

30. **कौशाम्बी : इतिहास का एक क्षीण-मंद राग** / कुमार अनिल 103
(पुस्तक : कौशाम्बी / लेखक : कुमार निर्मलेन्दु)

31. **स्त्री अस्मिता के प्रश्न एवं भक्तिकाल** / प्रो. बलराज पाण्डे 106
(पुस्तक : स्त्री अस्मिता और कविता का भक्ति युग / लेखक : डॉ. शशिकला त्रिपाठी)

32. **सचेतन अभय की मशाल** / डॉ. मनोज कुमार राय 109
(पुस्तक : व्हाई गांधी स्टिल मैटर्स / लेखक : राजमोहन गांधी)

Year-75, Volume-III
RNI No. 10591/62

July.-Sept. 2022
ISSN 0974-8768

अनेकान्त

(जैनविद्या एवं प्राकृत भाषाओं की समीक्षित त्रैमासिक शोध पत्रिका)

ANEKANTA

(A Peer Reviewed Quarterly Research Journal for Jainology & Prakrit Languages)

सम्पादक/ Editor

डॉ. जयकुमार जैन, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)

Dr. Jaikumar Jain, Muzaffarnagar (U.P.)

मो- 08512059089, 09760002389

वीर सेवा मन्दिर, नई दिल्ली-110002

Vir Sewa Mandir, New Delhi.110002

अनेकान्त

(जैनविद्या एवं प्राकृत भाषाओं की समीक्षित त्रैमासिक शोध पत्रिका)

ANEKANTA

(A Peer Reviewed Quarterly Research Journal for Jainology & Prakrit Languages)

संस्थापक

पं. जुगलकिशोर मुख्तार 'युगवीर'

Founder

Pt. Jugalkishore Mukhtar 'Yugveer'

श्री विनोदकुमार जैन, महामंत्री

Sh. Vinod Kumar Jain, Gen. Secretary

सम्पादक मण्डल

प्रो. डॉ. राजाराम जैन, नोएडा
प्रो. डॉ. वृषभ प्रसाद जैन, वर्धा
प्रा. डॉ. शीतलचन्द जैन, जयपुर
डॉ. श्रेयांस कुमार जैन, बड़ौत
श्री रूपचंद कटारिया, नई दिल्ली
प्रो. एम.एल. जैन, नई दिल्ली

Editorial Board

Prof. Dr. Rajaram Jain, Noida
Prof. Dr. Vrashabh Prasad Jain, Wardha
Pracharya Dr. Shital Chand Jain, Jaipur
Dr. Shreyans Kumar Jain, Baraut
Sh. Roopchand Kataria, New Delhi
Prof. M.L. Jain, New Delhi

पत्रिका शुल्क/ Journal Subscription

एक अंक- रुपए 25/- वार्षिक- रुपए 100/-

Each issue - Rs. 25/- Yearly - Rs. 100/-

सभी पत्राचार पत्रिका एवं सम्पादकीय हेतु पता-

वीर सेवा मन्दिर (जैनदर्शन शोध संस्थान)

21, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

All correspondence for the journal & Editorial

Vir Sewa Mandir (A Research Institution for Jainology)

21, Ansari Road, Darya Ganj, New Delhi-110002

Phone No. 011-43671985, 23250522, 09311050522

email : virsewa@gmail.com

विद्वान् लेखकों के विचारों से सम्पादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। लेखों में दिये गये तथ्यों और सन्दर्भों की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं। सभी प्रकार के विवादों का निपटारा दिल्ली न्यायालय के अधीन होगा।

विषयानुक्रमणिका

विषय	लेखक का नाम	पृष्ठ संख्या
1. सम्पादकीय	-डॉ. जयकुमार जैन	5-17
2. मुख्तार साहब और कुशल शोध पत्र अनेकांत	-सुबोध जैन 'मारौरा'	18-28
3. द्वादश अनुप्रेक्षा : एक अनुशीलन	-सुजश जैन 'मारौरा'	29-40
4. आदिपुराण और मनुस्मृति में वर्णित राजनैतिक परिदृश्य	-डॉ. योगेश कुमार जैन	41-59
5. समयदेशना में पुण्य-पाप की विवेचना	-डॉ. श्रेयांस जैन	60-69
6. स्वयंभूस्तोत्र की संस्कृत टीका का वैशिष्ट्य	-डॉ. जयकुमार जैन	70-79
7. कलिकालसर्वज्ञ आचार्य कुन्दकुन्द	-प्रो. सुदीप कुमार जैन	80-91
8.जैन जीवन शैली में-भावों का महत्व, पर्यावरण चेतना एवं संरक्षण के संदर्भ में	-डॉ. एन. के. खीचा	91-96

कलिकालसर्वज्ञ आचार्य कुन्दकुन्द

-प्रो. सुदीप कुमार जैन

आठवीं शताब्दी ई. के कवि की पंक्तियों से मैं इस विषय का मंगलाचरण करना चाहता हूँ-

'रे रे! कलिकालमहागइंद गलगज्जियस्स को कालो?
अज्ज वि सुपुरिस-केसरि-किसोर-चलणंकिया जा पुहवी॥'

अर्थात् अरे! कलिकालरूपी महागजेन्द्र! तुम्हारी गलगर्जना करने का यह कौन सा समय है? (अर्थात् अभी से क्यों इतना चिंघाड़ रहे हो?) अभी तो सत्पुरुषों रूपी सिंह-शावकों के चरण चिह्नों से यह पृथ्वी अलंकृत (सुशोभित) है।'

जहाँ केसरी सिंहों के शावक के पदचिह्न भी दिखाई पड़ें, तो विशालकाय गजराज भी उन्हें देखकर समझ जाता है कि यहाँ केसरी-सिंहों का समूह विद्यमान है और वह वहां चिंघाड़कर शेरों को अपनी उपस्थिति की सूचना देकर अपने 'काल' को बुलाना नहीं चाहता है। अतः वह चुप रहना ही बेहतर समझता है। इसी प्रकार सम्यक्चारित्र के धनी, जिनेश्वर के अनुयायियों के सम्यक्-आचरण के लक्षण जब तक लोक में प्रकट रहेंगे, तब तक भले ही कैलेण्डर के हिसाब से कलिकाल या पंचमकाल आ गया है; परन्तु इसकी दुहाई देकर भयादोहन करने की आवश्यकता नहीं है। सदाचारियों के जीवन्त-आचरण के सम्मुख कोई भी काल का प्रभाव नहीं होता है। कलिकाल भी सदाचारियों से भयभीत होकर दुबककर बैठता है और सज्जनों के लिये सदाचरण का मार्ग निष्कंटकरूप से विचरण के लिये छोड़ देता है। यह अद्भुत सत्य और तथ्य है। इसकी उपेक्षा करना पूर्णतः अविवेकपूर्ण कार्य है।

यह कथन मैंने सोददेश्यरूप से किया है, क्योंकि प्रायः यह कहा जाता है- 'अभी तो कलिकाल या पंचमकाल है, इसमें मोक्ष तो मिलना नहीं है, अन्य कोई साक्षात् उपलब्धि मिलनी नहीं है; फिर क्या लाभ है? पूर्ण-पुरुषार्थ तो हम चाहकर भी नहीं कर सकते हैं। काल के प्रभाव से

Year-76, Volume-3
RNI No. 10591/62
July.-Sept. 2023
ISSN 0974-8768

अनेकान्त

(जैनविद्या एवं प्राकृत भाषाओं की समीक्षित त्रैमासिक शोध पत्रिका)

ANEKANTA

(A Peer Reviewed Quarterly Research Journal for Jainology & Prakrit Languages)

सम्पादक/ Editor
डॉ. जयकुमार जैन, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)
Dr. Jaikumar Jain, Muzaffarnagar (U.P.)
मो. 08512059089, 09760002389

वीर सेवा मन्दिर, नई दिल्ली-110002
Vir Sewa Mandir, New Delhi-110002

विषयानुक्रमणिका

विषय	लेखक का नाम	पृष्ठ संख्या
1. लघुविद्यानुवाद में प्रतिपादित मंत्र और उसकी उपयोगिता	सम्पादकीय	4-12
2. लौकान्तिक-देवों का अलौकिक-स्वरूप	- प्रो. सुदीप कुमार जैन	13-23
3. आप्तमीमांसा में प्रतिपादित भावादि एकान्तवाद में दोष और उनका निराकरण	- डॉ. अनिल कुमार जैन	24-33
4. स्वयम्भूस्तोत्र की दार्शनिकता	- डॉ. नरेन्द्रकुमार जैन	34-49
5. स्याद्वाद क्रांति के महान् सर्जक आचार्य समन्तभद्र	- डॉ. अरिहन्त कुमार जैन	50-57
6. कर्म सिद्धान्त और मानसिक शांति (गोम्मटसार के सन्दर्भ में)	- डॉ. वीरचन्द्र जैन	58-73
7 गणाचार्य श्री विरागसागर जी महाराज कृत चूर्णिसूत्र में लेश्या विवेचन	- सुनील कुमार जैन	74-87
8. जैन परम्परा में समाधि और सल्लेखना का महत्त्व	- नीलम जैन सर्राफ	88-96

लौकान्तिक-देवों का अलौकिक-स्वरूप

- प्रो. सुदीप कुमार जैन

यह तो हम सभी जानते हैं कि देवगण 'अविरति' ही होते हैं और 'विरति' बनने की अभिलाषा उनके यावज्जीवन अपूर्ण ही रहने के कारण वे मनुष्यों को व्रतानुष्ठान, संयम व तपःसाधना से मोक्षलाभ करते देख मनुष्य-पर्याय के प्रति अभिलषित रहते हैं। इसीलिए यह उक्ति प्रचलित हुई कि 'नर-काया को सुरपति तरसें।'

वे 'अविरति' देवगण इसी कमजोरी के कारण दिव्य-विभूतियों से युक्त होते हुए भी भले ही भोगाभिलाषी-मनुष्यों के द्वारा अभिवन्दित रहे हों, किन्तु 'धर्म' नामक पुरुषार्थ के साधकों की तुलना में प्राय: उपेक्षणीय ही माने गये हैं। क्योंकि किसी भी शास्त्राभ्यासी को संभवत: देवों के किसी ऐसे वर्ग को सूक्ष्मता से परिचय एवं पहिचान नहीं है, जो जिनाम्नाय में स्वर्ग के अविरतरूप अभिशाप से अछूते एवं आदर्श माने गये हों।

यद्यपि हम पांचवें स्वर्ग-विमान 'ब्रह्मलोक' के निवासी 'ब्रह्म-लौकान्तिक' देवों, जिन्हें संक्षेप में 'लौकान्तिक-देव' ही कहा जाता है, के विषय में नाममात्र परिचय रखते हैं कि ये तीर्थंकरों के वैराग्य-प्रसंग में उनके वैराग्य की अनुमोदना करने के लिए आते हैं। इसके अतिरिक्त इनके विषय में कोई विशेष जिज्ञासा न तो की जाती है और न ही लोग इनके विषय में विशेष-चर्चा ही करते हैं।

मैंने जब 'प्रवचनसार' जी ग्रंथ पर चर्चा के प्रसंग में सहज ही यह भाव व्यक्त किये कि 'आचार्य कुन्दकुन्द देव की जैसी निर्दोष-साधना एवं मोक्ष-प्राप्ति की जैसी उत्कट भावना थी, उसके अनुरूप वे संभवत: 'लौकान्तिक-देव' की पर्याय में गये होंगे।

किन्तु इस विषय में कहीं किसी टीकाकार-आचार्य या मनीषी ने कोई उल्लेख तक नहीं किया होने के कारण मैं अपने भावों में 100 प्रतिशत दृढ़ होते हुये भी कोई तथ्यात्मकरूप से विवेचन प्रस्तुत नहीं कर पा रहा था। अभी प्रसंगवश मैंने लौकान्तिक-देवों के विषय में उपलब्ध-आगम-प्रमाणों

April to June 2023
E-Journal
Volume I, Issue XLII

RNI No. – MPHIN/2013/60638
ISSN 2320-8767, E-ISSN 2394-3793
Scientific Journal Impact Factor -7.671

Naveen Shodh Sansar

(An International Refereed/ Peer Review Research Journal)

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Narayan Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795, Vikas Nagar Extension 14/2, NEEMUCH (M.P.) 458441, (INDIA)
Mob. 09617239102, Email : nssresearchjournal@gmail.com, Website www.nssresearchjournal.com

109. 'भ्रमरगीत' एक विरह विभूषित काव्य कथा (डॉ. मुकेश कुमार) 365

110. हिन्दी साहित्य में आधुनिकता बोध और महिला लेखन (डॉ. सरला पण्ड्या) 368

111. मोहन राकेश के कथा-साहित्य में नारी-चित्रण (डॉ. प्रणति बेहेरा) 370

112. Nature and Nature-Based Art of Padma Shri Late Ram Gopal Vijayvargiya 377
(Dr. Jwala Prasad Kaloshia)

113. महाज्ञानी-अप्रतिबुद्ध से अद्वितीय-प्रतिबुद्धता के अद्भुत-यात्री : इन्द्रभूति गौतम (प्रो. सुदीप कुमार जैन) 382

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 7.671
April to June 2023, E-Journal, Vol. I, Issue XLII

महाज्ञानी-अप्रतिबुद्ध से अद्वितीय-प्रतिबुद्धता के अद्भुत-यात्री : इन्द्रभूति गौतम

प्रो. सुदीप कुमार जैन*

* आचार्य एवं विभागाध्यक्ष (प्राकृतभाषा) श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय (केन्द्रीय विश्वविद्यालय) नई दिल्ली, भारत

प्रस्तावना - यह शीर्षक किसी बड़े-विरोधाभास का प्रतीक है, परन्तु विशिष्ट-सन्दर्भों को परिलक्षित रखें, तो इससे दृष्टिपटल से तिरोहित रहे कई महनीय-विषयों का रहस्योद्घाटन होता है। आइये, उन विशिष्ट-सन्दर्भों के साथ-साथ उन अदृष्ट-तथ्यों की मीमांसा भी समझें, जो हमारे विचारपटलों से ओझल रहे हैं।

तथ्य-क्रमांक 1:- चौबीसवें तीर्थंकर भगवान् श्री महावीर स्वामी के काल में वैदिक-परम्परा के भी कई बड़े पंडित थे, जिनमें सर्वश्रेष्ठ विद्वान् का नाम इन्द्रभूति गौतम था।

उस समय इनके पांडित्य एवं कर्मकांड की लोक में इतनी प्रतिष्ठा थी, कि बड़े-बड़े राजा व सामन्त इनकी विद्वत्ता का लाभ लेते थे व इनका सम्मान करके इन्हें प्रभूत-दक्षिणा देते थे। इनके साथ उस समय के 500 श्रेष्ठ एवं मेधावी-वेदाभ्यासी इनके शिष्यों के रूप में चौबीसों घंटे इनकी सेवा में तत्पर रहते थे। ये बहुत बड़े वाग्मी, भाषाविद्, कर्मकांड के विशेषज्ञ एवं वादी विद्वान् थे। अत: इन्हें मैंने 'महाज्ञानी' विशेषण प्रयोग किया है।

तथ्य-क्रमांक 2:- जिनाम्नाय के अनुसार जिसे जिनेन्द्र-प्रज्ञप्त वस्तु-व्यवस्था का ज्ञान न हो एवं आत्मतत्त्व की निर्मल-अनुभूतिरूप सम्यग्दर्शन की प्राप्ति नहीं हुई हो, वह 'अप्रतिबुद्ध' अर्थात् अज्ञानी ही कहा गया है। क्योंकि जैनदर्शन में मात्र क्षयोपशमज्ञान पर आधारित पांडित्य को 'प्रज्ञा-परीषह' कहकर उपेक्षित किया गया है। स्वआत्महित जिसने नहीं साधा, वह लोकहित भी वास्तव में नहीं कर सकता है— इस सिद्धान्त के आधार पर उसके समस्त पांडित्य को जैनदर्शन 'अज्ञान' ही मानता है।

जैनदर्शन की स्पष्ट-मान्यता है कि 'आत्मज्ञान ही ज्ञान है, शेष सभी अज्ञान'। इसीकारण अन्य सब बातों के प्रकांड-पंडित होते हुये भी इन्द्रभूति गौतम आत्मज्ञान एवं जिनेन्द्र-कथित तत्त्वज्ञान से नितान्त-अनभिज्ञ थे, अतएव उन्हें 'महाज्ञानी' के साथ 'अप्रतिबुद्ध' विशेषण भी शीर्षक में सुविचारित रूप से प्रयोग किया गया है।

तथ्य-क्रमांक 3:- 'अद्वितीय-प्रतिबुद्धता' का अभिप्राय बहुत गहरा है। यह लौकिक-पांडित्य की मानसिकता में समझ में नहीं आ सकता है। **इसके लिये हमें एक ओर 'केवली' और 'केवलज्ञान' को समझना होगा और दूसरी ओर हमें 'द्वादशांगी-श्रुत' को समझना होगा। इन दोनों के मध्यवर्ती जो होते हैं, उन्हें 'गणधर' कहा जाता है।**

यहाँ महत्त्वपूर्ण-बात यह भी है कि इन दोनों के बारे में सामान्यजनों को मात्र टटोलकर जानने जितनी मोटी-जानकारी ही पता है, इनकी वास्तविकता का तो अनुमान लगाना भी सामान्यजनों को अत्यन्त-कठिन ही नहीं, असंभवप्राय: है। अत: इन दोनों पक्षों का संक्षिप्त, किन्तु सटीक-प्रतिपादन करने के बाद इनके मध्यवर्ती गणधरदेव के स्वरूप का स्पष्ट-आभास कराऊँगा, ताकि इस विशेषण का अर्थ स्पष्ट हो सके।

पहला-पक्ष 'केवलज्ञान' का है। 'केवलज्ञान' अर्थात् आत्मा के ज्ञानगुण की वह परिणति, जो विश्व के अनन्त-जीवों, अनन्तानन्त-पुद्गलों, जीवों और पुद्गलों के क्षेत्र से क्षेत्रान्तरण के गमन एवं स्थिति के निर्धारक लोकाकाश-व्यापी धर्म और अधर्म-द्रव्यों, लोकाकाश के प्रत्येक प्रदेश पर विद्यमान सम्पूर्ण-परिणमनों के निर्धारक असंख्य-कालाणुओं, समस्त द्रव्यों के अवगाहनत्व के निर्धारक लोकालोक-व्यापी आकाश-द्रव्य के एक-एक प्रदेश को, उनमें से प्रत्येक के अनन्त-गुणों को, उन अनन्तानन्त-गुणों में प्रत्येक गुण के सर्वकालवर्ती-अनन्तानन्त-परिणमनों को युगपत् अत्यन्त निर्मलता/स्पष्टता के साथ प्रत्यक्ष जानने में समर्थ चैतन्य-परिणति का नाम 'केवलज्ञान' है। इतना ही नहीं, ऐसे अनन्त लोकालोक आ जायें, तो उन सबको भी केवलज्ञान की एक पर्याय बिना किसी अस्पष्टता के सहजतापूर्वक एक ही समय में प्रत्यक्ष जानने की सामर्थ्य रखती है।— ऐसा तो केवलज्ञान का स्वरूप है।

इस केवलज्ञान के धनी होते हैं केवली-परमात्मा। **ऐसी केवलज्ञान की अनन्तानन्त-पर्यायें जिसमें से प्रतिसमय परिणत हों, तब भी जिसकी स्वाभाविक-सामर्थ्य में रंचमात्र भी न्यूनता/कमी न हो— ऐसा 'ज्ञान' नामक गुण आत्मा का प्रतिनिधि-गुण है। और इस ज्ञान जैसे अनन्त-गुणों का निधान यह चैतन्य-तत्त्व आत्मा है।** इस केवलज्ञानरूप-परिणति से परिणत आत्मा को ही केवली कहा गया है।

इन केवलियों में जो सर्वजीवों के हित का करुणा-भावना से दिव्यध्वनि द्वारा वस्तु-स्वरूप का प्ररूपण करते हैं, उन्हें 'तीर्थंकर' कहा जाता है।

इन तीर्थंकरों की 'दिव्यध्वनि' में समस्त-श्रोताओं की जिज्ञासाओं को अधिगत करके उन्हीं की भाषाओं में समाधान देने की अनिर्वचनीय-क्षमता विद्यमान होती है, तथापि यह जितना केवलज्ञान जानता है, दिव्यध्वनि उसका अनन्तवाँ-भाग ही प्रतिपादित कर पाती है।

क्योंकि ज्ञान की जानन-सामर्थ्य तो अनन्त है, परन्तु ध्वनि की अभिव्यंजन-सामर्थ्य केवलज्ञान की तुलना में अनन्तवाँ-भाग मात्र है। चूँकि **केवलज्ञान 'निरावरण' या 'क्षायिकज्ञान' है**, अत: वह अपरिमित जान सकता है; किन्तु जो दिव्यध्वनि के श्रोतागण होते हैं, वे मुख्यत: सभी

October to December 2023
E-Journal
Volume I, Issue XLIV

RNI No. – MPHIN/2013/60638
ISSN 2320-8767, E-ISSN 2394-3793
Scientific Journal Impact Factor- 7.671

Naveen Shodh Sansar

(An International Refereed/ Peer Review Research Journal)

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Narayan Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795, Vikas Nagar Extension 14/2, NEEMUCH (M.P.) 458441, (INDIA)
Mob. 09617239102, Email : nssresearchjournal@gmail.com, Website www.nssresearchjournal.com

129. महिला के गरीबी उन्मूलन में राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन का एक आर्थिक अध्ययन 431
(झाबुआ जिले के राणापुर विकासखण्ड के विशेष संदर्भ में) (डॉ. हेमता डुडवे)

130. Jammu & Kashmir Post Article - 370 Abrogation: An Analysis of Socio-Economic 434
and Political Dynamics (Rafia Banoo Dar)

131. State of Democracy in Bangladesh: From Praetorianism to One Party Rule (Rafia Banoo Dar)...... 437

132. राजस्थान का कला दृश्य एवं समकालीन प्रकृति चित्रकार (डॉ.ज्वाला प्रसाद कलोशिया) 440

133. जनजातीय वर्ग की राजनीतिक जागरूकता का लिंग एवं शिक्षा के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन (राकेश देवड़ा) 443

134. The Role and Impact of the Comptroller and Auditor General (CAG) of India in Promoting 445
Financial Accountability and Transparency (Bhupendra Tank)

135. भीलवाड़ा जिले का प्रमुख धार्मिक स्थलों का अध्ययन पर्यटन के विशेष संदर्भ में (कमलेश कुमार नाथ).......... 448

136. कालिदास साहित्य में पर्यावरण चेतना (डॉ. धीरज प्रकाश जोशी, विपिन व्यास) 451

137. 'समयसार' के मंगलाचरण में ''सुदकेवली'' (प्रो. सुदीप कुमार जैन) 453

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 7.671
October to December 2023, E-Journal, Vol. I, Issue XLIV

'समयसार' के मंगलाचरण में ''सुदकेवली''

प्रो. सुदीप कुमार जैन*

* आचार्य एवं विभागाध्यक्ष (प्राकृतभाषा) श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय (केन्द्रीय विश्वविद्यालय) नई दिल्ली, भारत

प्रस्तावना – यह तो सर्वविदित ही है कि आचार्य कुन्दकुन्द देव प्रणीत कालजयी आगम-ग्रंथ 'समयसार' जी में मंगलाचरण के जिनाम्नाय-सम्मत सभी अंगोपांगों का उत्कृष्ट रीति से अनुपालन दृष्टिगत होता है। किन्तु उसमें ग्रंथ को 'सुदकेवली-भणिदं' कहकर श्रुतकेवली भद्रबाहु स्वामी द्वारा कथित कहना कहीं जिज्ञासा विशेष उत्पन्न करता है।

यह तो स्पष्ट ही है कि इस ग्रंथ के वर्तमान-स्वरूप के प्रणेता युगप्रधान आचार्य कुन्दकुन्द देव हैं। यदि आत्मश्लाघा से बचकर अपनी विनम्रता प्रकट करने रूप शालीनता की प्रस्तुति ही उन्हें यहाँ अपेक्षित थी, तो वे अपने दीक्षागुरु आचार्य जिनचन्द्र जी का नामोल्लेख कर सकते थे। इससे विनय भी हो जाती, और 'गुरु-नाम न छिपाइये' के शिष्टाचार का परिपालन भी हो जाता। यदि वह नहीं कहना था, तो अपने दीक्षा-संघ 'नंदिसंघ' के संस्थापक महान् तपस्वी एवं श्रुतवेत्ता आचार्य माघनंदि का नामोल्लेख कर सकते थे।

किन्तु इन दोनों साक्षात् गुरुवर्यों का उल्लेख करना छोड़कर जिन्हें आचार्य कुन्दकुन्द देव ने देखा तक नहीं, ऐसे पंचम श्रुतकेवली भद्रबाहु स्वामी को समयसार ग्रंथ का वक्ता कहना कुछ जिज्ञासा-विशेष उत्पन्न करता है कि आचार्य कुन्दकुन्द देव जैसे महान् विवेकी एवं सारस्वत आचार्य ने ऐसा क्यों किया? अवश्य ही इसके पीछे कोई गंभीर कारण रहे होंगे, जिनका विश्लेषण लिखित रूप में कहीं नहीं मिलता है, परन्तु इनका विश्लेषण अवश्य ही अपेक्षित है। यही प्रयास इस लघु-आलेख में यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

1. **प्रश्न-बिन्दु** है कि उन्होंने श्रुतकेवली भद्रबाहु का ही स्मरण/वंदन क्यों किया? जबकि उनकी साक्षात् गुरुपरम्परा थी ?—इसका एक उत्तर तो मैंने अपने आलेखों में दिया ही है, जिनका निष्कर्ष यही है कि वे दोनों आचार्य देव (माघनंदि एवं जिनचन्द्र) अपने मुनिजीवन में दिगम्बर-मुनिचर्या की गरिमा के विपरीत कुछ कार्य कर चुके थे, जिसका भले ही उन्होंने का परिमार्जन कर लिया था; पर वह कार्य किये तो मुनिपद पर रहते हुये ही थे। अत: दिगम्बर जैन मुनिधर्म में प्रसक्त हुये शिथिलाचार का पुरजोर-निषेध करके निर्दोष-मुनिचर्या की स्थापना का बीड़ा उठानेवाले युगप्रवर्तक आचार्य कुन्दकुन्द देव ने सदोष-मुनिधर्म वाले इन दोनों का नामोल्लेख करना संभवत: समीचीन नहीं समझा।

इस विषय में कुछ उन्होंने अलग से उल्लेख तो नहीं किया है, किन्तु 'पीनो देवदत्त: दिवा न भुंक्ते' के प्रचलित न्याय के अनुसार सब स्वीकार करते हैं कि यदि वह देवदत्त मोटा-ताजा है – दिन में कुछ नहीं खाता है; तो कोई भी सहज ही समझ सकता है कि वह रात में खाता होगा। इसी प्रकार जिन आचार्य कुन्दकुन्द देव को दिगम्बर जैन मुनिधर्म में रंचमात्र भी शिथिलाचार स्वीकार्य नहीं था, तो कोई भी समझ सकता है कि उन्होंने इसीकारण शिथिलाचार के दोष लगानेवाले अपने इन गुरुवर्यों का नाम लेना उचित नहीं समझा।

इसका समर्थक-प्रमाण यह भी है कि इन दोनों आचार्यों ने जब ऐसे शिथिलाचार के कार्य किये, तो परिष्कार के बाद जितने समय तक वे आचार्य-पद पर रहे, उतने समय के काल को श्रुतावतारों व पट्टावलियों में स्थान नहीं दिया गया है, वह समय खाली दिखाया गया है। यह श्रुतावतार एवं पट्टावलियों वाले ग्रंथ कुन्दकुन्द आचार्य देव के परवर्ती रचनायें हैं, अत: उनमें ऐसा किया जाना इनके रचयिताओं पर आचार्य कुन्दकुन्द देव का स्पष्ट प्रभाव माना जा सकता है। यही कारण है कि आचार्य कुन्दकुन्द देव ने अपने इन दोनों गुरुवर्यों का नामोल्लेख नहीं किया।

तब यह कहा जा सकता है कि वे आचार्य अर्हद्बलि आदि का उल्लेख कर सकते थे, जो इनके स्पष्ट पूर्ववर्ती थे, किन्तु वे नंदिसंघ की स्थापना से पहले तो नीति यही है कि या तो अपने साक्षात् गुरुवर्यों का उल्लेख किया जाये, या फिर स्थापित पदों (तीर्थंकर/ केवली/श्रुतकेवली) का उल्लेख मंगलाचरण में किया जाये; तो आचार्य कुन्दकुन्द देव ने इसी परम्परा का पालन करते हुये अंतिम श्रुतकेवली भद्रबाहु स्वामी को समयसार का प्रवक्ता कहा है। इस कथन से आचार्य कुन्दकुन्द देव की गरिमा व आगम-निष्ठता प्रकट हुई है।

2. दूसरी बात यह भी है कि इस वाक्यांश में अंतिम श्रुतकेवली भद्रबाहु स्वामी का साक्षात् स्मरण किया जाना कुन्दकुन्द आचार्य देव के ग्रंथों का आगमिकता व जिनवाणी रूप होना प्रमाणित करता है। क्योंकि समयसार में जिस शैली में वे पर और पर्याय से भिन्न त्रिकालशुद्ध ज्ञायक भगवान् आत्मा की बात करने जा रहे थे, उसे कोई आचार्य कुन्दकुन्द देव की निजी प्रतिपत्ति न मान ले, कि 'यह तो आचार्य कुन्दकुन्द देव की निजी मान्यता है, मूल-आगम-परम्परा में ऐसी त्रिकाल-शुद्धता की बात नहीं रही होगी। भला नर-नारकादि पर्यायों में संसार-परिभ्रमण करनेवाले मोही जीव को त्रिकाल-शुद्ध कैसे कहा जा सकता है?'— ऐसी आशंकाओं का निवारण तभी संभव था, जब यह कथन मूल-आगम-परम्परा का सिद्ध हो; न कि आचार्य कुन्दकुन्द देव का निजी-कथन। क्योंकि कुन्दकुन्द आचार्य देव के समकालीन लिपिबद्ध किये गये आगम-साहित्य में कर्म-सिद्धान्तपरक ग्रंथ थे, जो कि आत्मा को कर्मों के बंधन में पड़ा हुआ सिद्ध कर रहे थे। ऐसी स्थिति में आत्मा को 'कर्मों से त्रिकाल अबद्ध-अस्पृष्ट' घोषित करना जैन

ज्ञानशौर्यम्

ISSN : 2582-0095

Peer Reviewed and Refereed International Scientific Research Journal

GYANSHAURYAM INTERNATIONAL SCIENTIFIC REFEREED RESEARCH JOURNAL

Volume 7, Issue 1, January-February-2024

Email : editor@gisrrj.com Website : http://gisrrj.com

Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.gisrrj.com
OPEN ACCESS
© 2024 GISRRJ | Volume 7 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

आचार्य कुन्दकुन्द देव के काल-विषयक समीक्ष्य-बिन्दु

प्रो. सुदीप कुमार जैन
आचार्य, एवं विभागाध्यक्ष, प्राकृतभाषा-विभाग, श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विश्वविद्यालय
(केन्द्रीय विश्वविद्यालय) नई दिल्ली

Article Info

Volume 7, Issue 1
Page Number : 81-89
Publication Issue :
January-February-2024

Article History
Accepted : 25 Jan 2024
Published : 15 Feb 2024

शोधसारांश- जैन-आगमिक-वाङ्मय के मूर्धन्य-मनीषी एवं साहित्यकार आचार्य कुन्दकुन्द देव के काल-विषयक-निर्धारण में उनके द्वारा प्रस्तुत कतिपय ऐसे तथ्य हैं, जो अति-उत्साहित-जनों को अपनी गवेषी-मानसिकता के पोषणार्थ कई आधार-बिन्दु प्रदान कर देते हैं। इनके आधार पर वे अति-उत्साही-विद्वान् प्राचीन मनीषियों एवं साहित्यकारों के काल-निर्धारण के मानदंडों एवं पद्धतियों की उपेक्षा करते हुये छोटे-मोटे कथनों को ही अंतिम-प्रमाण के रूप में मानकर उनके आधार पर अपनी निष्पत्ति कर देते हैं और "यही अंतिम-सत्य है" --ऐसी निर्णीति प्रस्तुत करते हुये अन्य ज्वलन्त-साक्ष्यों की उपेक्षा करने के लिये तत्पर हो जाते हैं, जो कि न केवल वास्तविक होते हैं, बल्कि उनकी उपेक्षा से सारी परम्परा का ऐतिह्य ही संकटास्पद हो जाता है। आचार्य कुन्दकुन्द ने अपने ग्रन्थों की जिनाम्नाय की दृष्टि से मूलानुगामिता एवं प्रामाणिकता ज्ञापित करने की दृष्टि से 'अंतिम-श्रुतकेवली आचार्य भद्रबाहु स्वामी को अपना 'गमकगुरु' क्या लिख दिया, इन लेखकों ने उन्हें आचार्य कुन्दकुन्द के दीक्षा-गुरु के रूप में निर्णीत करते हुये आचार्य कुन्दकुन्द को अंतिम-श्रुतकेवली आचार्य भद्रबाहु स्वामी का समकालीन या किंचित्-उत्तरवर्ती मान लिया है और जोर-शोर से इस बात का धुंआधार-प्रचार प्रारम्भ कर दिया है।-- यह इसलिये भी चिंता का विषय है कि आचार्य कुन्दकुन्द जिस नंदिसंघ के आचार्य थे, उस नंदिसंघ की स्थापना ही विक्रम की प्रथम-शताब्दी में हुई थी, जबकि अंतिम-श्रुतकेवली आचार्य श्री भद्रबाहु स्वामी सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य के धर्मगुरु के रूप में स्थापित हैं और उनका काल लगभग पाँचवीं शताब्दी ईसापूर्व की उपान्त्य-बेला में प्रमाणित है। तब दोनों के कालों में लगभग 400 वर्षों से अधिक का अन्तर आ जाता है। इतिहास के क्षेत्र में यह बहुत-बड़ा अन्तर है और इससे अनेकों पूर्वापर-घटनाक्रमों के काल-विषयक-निर्धारण में सब कुछ डाँवाडोल हो जायेगा। अत: ऐतिहासिक साक्ष्यों की तथ्यात्मकरूप से प्रस्तुति के साथ-साथ काल-निर्धारण के स्थापित-मानदण्डों को आधार बनाकर इस आलेख में आचार्य कुन्दकुन्द का काल-निर्धारण की समीक्षा की गयी है।

मुख्य शब्द- जैन-आगमिक-वाङ्मय, कुन्दकुन्द देव, अंतिम-सत्य, उपान्त्य-बेला।

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

शोधशौर्यम्

ISSN - 2581-6306

Peer Reviewed and Refereed
International
Scientific Research Journal

website : www.shisrrj.com

SHODHSHAURYAM
INTERNATIONAL SCIENTIFIC REFEREED RESEARCH JOURNAL

Volume 7, Issue 1, January-February-2024

Email: editor@shisrrj.com, shisrrj@gmail.com

Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.shisrrj.com
OPEN ACCESS
© 2024 SHISRRJ | Volume 7 | Issue 1
ISSN : 2581-6306
doi : https://doi.org/10.32628/SHISRRJ

शास्त्र-रचना के सिद्धांत और 'समयसार'

प्रो. सुदीप कुमार जैन
आचार्य, एवं विभागाध्यक्ष, प्राकृतभाषा-विभाग, श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विश्वविद्यालय
(केन्द्रीय विश्वविद्यालय) नई दिल्ली-110016

Article Info

Publication Issue :
January-February-2024
Volume 7, Issue 1
Page Number : 155-159
Article History
Received : 01 Feb 2024
Published : 15 Feb 2024

शोधसारांश- प्राय: धार्मिक और आध्यात्मिक ग्रन्थों को मात्र वैचारिक-अभिव्यक्ति मानकर उनके हर कथन को स्वतंत्र मान लिया जाता है और उनमें परस्पर सम्बद्धता एवं प्रबन्धन-गत सुनियोजितता की अपेक्षा तक नहीं की जाती है। इस पूर्वाग्रही-अवधारणा का सर्वाधिक बड़ा-प्रभाव यह होता है कि उनके प्रतिपादनों को उस कथन तक सीमित करके ही उसकी महनीयता का मूल्यांकन किया जाता है; किन्तु एक ग्रन्थ के रूप में उसके समस्त-कथनों की परस्पर-अनुस्यूति एवं उसका साहित्यशास्त्रीय-ग्रन्थों की भाँति प्रबन्धन-गत नियमों के आधार पर मूल्यांकन तक करने का प्रयास नहीं किया जाता है। इसकारण इन ग्रन्थों की साहित्यिकता के विषय में गम्भीरता से विचार तक नहीं किया जाता है। इन ग्रन्थों के बारे में इस मिथ को तोड़ने एवं प्राच्य-भारतीय-मनीषा के द्वारा प्रणीत धार्मिक एवं आध्यात्मिक ग्रन्थों के निर्माण-नियमों की विरासत का परिचय देने की दृष्टि से यह शोध-आलेख निर्मित है। इससे हम आज से 2000 वर्षों से भी प्राचीन भारतीय आगमिक-वाङ्मय के महान्-प्रणेता आचार्य कुन्दकुन्द के वाङ्मय की शास्त्रीयता को परखने की दृष्टि विकसित कर सकेंगे और उनके ग्रन्थों के प्रबन्धन-कौशल की सुनियोजितता के अभिज्ञ हो सकेंगे।

मुख्य शब्द- शास्त्र-रचना, समयसार, आध्यात्मिक, आचार्य कुन्दकुन्द, प्रबन्धन-कौशल, मूल्यांकन।

विशेष-निवेदन :-- इसमें मैंने लेख के अंत में कई सन्दर्भ दिये हैं। उन पर जो चिह्न लगे हैं, वे ही चिह्न लेख के बात में दिये गये हैं। आप सभी सुबुद्ध है और समझ सकते हैं कि वे सन्दर्भ उन स्थलों पर जोड़कर पढ़े जायें। मैं पूरी गाथायें वहाँ नहीं दे सका, तदर्थ खेद है। ऐसा प्रमाद या समयाभाव के कारण नहीं किया है, बल्कि इसलिये किया है कि इतने सारे सन्दर्भों को वहाँ पर देने से लेख की तारतम्यता टूट जाती। अत: जिन्हें उन कथनों की प्रामाणिकता की पुष्टि अपेक्षित है, वे कृपया इन सन्दर्भों को उन ग्रन्थों में मूल से देखकर पुष्टि कर सकते हैं।-- सुदीप कुमार जैन]

यह 'शास्त्र'- संज्ञा किसी भी कृति को यों ही नहीं मिल जाती है, बल्कि शास्त्र-रचना (ग्रंथ-निर्माण) के सात निश्चित-नियमों के निर्दोष-रीति से पालन करने पर मिलती है। इनका आचार्य कुन्दकुन्द देव के ग्रंथों में निर्दोष-रीति से

Copyright © 2024 The Author(s): This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution **4.0 International License (CC BY-NC 4.0)** which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium for non-commercial use provided the original author and source are credited.

ज्ञानशौर्यम्

ISSN : 2582-0095

Peer Reviewed and Refereed International Scientific Research Journal

GYANSHAURYAM INTERNATIONAL SCIENTIFIC REFEREED RESEARCH JOURNAL

Volume 7, Issue 2, March-April-2024

Email : editor@gisrrj.com Website : http://gisrrj.com

Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : **www.giarrj.com**

OPEN ACCESS

© 2024 GISRRJ | Volume 7 | Issue 2 | ISSN : 2582-0095

चातुवर्ण्य-मुनिसंघ का स्वरूप

प्रो. सुदीप कुमार जैन
आचार्य, एवं विभागाध्यक्ष, प्राकृतभाषा-विभाग, श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विश्वविद्यालय
(केन्द्रीय विश्वविद्यालय) नई दिल्ली

Article Info
Article History
Accepted : 25 March 2024
Published : 05 April 2024

Publication Issue :
Volume 7, Issue 2
March-April-2024

Page Number : 57-60

शोधसारांश- चातुवर्ण्य-मुनिसंघ जैन धर्म का एक महत्वपूर्ण अंग है, जिसमें जैन साधुओं का समूह होता है। मुनिसंघ जैन धर्म का एक महत्वपूर्ण और विशेष अंग है, जिसे 'जैन मुनि' या 'साधु' कहा जाता है। इन साधुओं का मुख्य उद्देश्य आत्मसाक्षात्कार और मोक्ष की प्राप्ति होती है। मुनिसंघ अपने आत्मज्ञान और विरक्ति के माध्यम से समग्र उन्मुक्ति की प्राप्ति की दिशा में प्रयासरत होते हैं। वे ध्यान, तप, व्रत, अहिंसा और अपने जीवन के विभिन्न पहलुओं के माध्यम से इस लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। वे अपने जीवन में अहिंसा, सत्य, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, और तप का पालन करते हैं। मुनिसंघ जैन समाज में बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि ये साधु और साध्वीओं का समूह समाज के लिए आदरणीय और आदर्श होता है। उन्होंने संसारिक बंधनों से मुक्त होकर आत्मा के प्रकाश की प्राप्ति के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित किया होता है। मुनिसंघ के सदस्य अकेले रहते हैं और साधु-समाज (संघ) में आध्यात्मिक अभ्यास करते हैं। वे विभिन्न तप, ध्यान, प्रवचन और शिक्षा के माध्यम से जैन धर्म के सिद्धांतों को प्रस्तुत करते हैं और समुदाय के लोगों को धार्मिक ज्ञान प्रदान करते हैं। इस प्रकार, जैन मुनिसंघ जैन समाज का एक महत्वपूर्ण स्तंभ है, जो आध्यात्मिक उन्नति और सामाजिक नैतिकता को प्रोत्साहित करता है।

मुख्य शब्द- चातुवर्ण्य-मुनिसंघ, जैन, धर्म, मोक्ष, तप, ध्यान, प्रवचन, शिक्षा।

आचार्य कुन्दकुन्द देव ने 'प्रवचनसार' के 'चरणानुयोग-चूलिका' नामक अधिकार की 249 नंबर की गाथा में आगत "चादुव्वण्णस्स समणसंघस्स" वाक्यांश की टीका में आचार्य जयसेन जी ने लिखा है--

अत्र 'श्रमण'-शब्देन 'श्रमण'-शब्दवाच्या ऋषि-मुनि-यत्यनगारा ग्राह्या:।

इस विषय में वे किसी पूर्वाचार्य के ग्रन्थ का उद्धरण देते हुये लिखते हैं--

"देशप्रत्यक्षवित्-केवलभृद्-इह मुनि: स्याद्, ऋषि: प्रसृत-ऋद्धिरारूढा:, श्रेणियुग्मेऽजनि यति:, अनगारोऽपर: साधुवर्ग:।" ..

अर्थ:-- यहाँ पर 'श्रमण' शब्द से 'श्रमण' शब्द के द्वारा वाच्य ऋषियों, मुनियों, यतियों और अनगारों का ग्रहण करना चाहिये।

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License.